रामचरित्मानस

उत्तरकाण्ड

शिव-पार्वती संवाद, गरुड़ मोह, गरुड़जी का काकभुशुण्डि से रामकथा और राम महिमा सुनना

चौपाई :
*** गिरिजा सुनहु बिसद यह कथा। मैं सब कही मोरि मति जथा॥ राम चरित सत कोटि अपारा। श्रुति सारदा न बरनै पारा॥1॥
भावार्थ:-
(शिवजी कहते हैं-) हे गिरिजे! सुनो, मैंने यह उज्ज्वल कथा, जैसी मेरी बुद्धि थी, वैसी पूरी कह डाली। श्री रामजी के चरित्र सौ करोड़ (अथवा) अपार हैं। श्रुति और शारदा भी उनका वर्णन नहीं कर सकते॥1॥
*** राम अनंत अनंत गुनानी। जन्म कर्म अनंत नामानी॥ जल सीकर महि रज गनि जाहीं। रघुपति चरित न बरनि सिराहीं॥2॥
भावार्थ:-
भगवान् श्री राम अनंत हैं, उनके गुण अनंत हैं, जन्म, कर्म और नाम भी अनंत हैं। जल की बूँदें और पृथ्वी के रजकण चाहे गिने जा सकते हों, पर श्री रघुनाथजी के चरित्र वर्णन करने से नहीं चूकते॥2॥
*** बिमल कथा हरि पद दायनी। भगति होइ सुनि अनपायनी॥ उमा कहिउँ सब कथा सुहाई। जो भुसुंडि खगपतिहि सुनाई॥3॥
भावार्थ:-
यह पवित्र कथा भगवान् के परम पद को देने वाली है। इसके सुनने से अविचल भक्ति प्राप्त होती है। हे उमा! मैंने वह सब सुंदर कथा कही जो काकभुशुण्डिजी ने गरुड़जी को सुनाई थी॥3॥
*** कछुक राम गुन कहेउँ बखानी। अब का कहौं सो कहहु भवानी॥ सुनि सुभ कथा उमा हरषानी। बोली अति बिनीत मृदु बानी॥4॥
भावार्थ:-
मैंने श्री रामजी के कुछ थोड़े से गुण बखान कर कहे हैं। हे भवानी! सो कहो, अब और क्या कहूँ? श्री रामजी की मंगलमयी कथा सुनकर पार्वतीजी हर्षित हुईं और अत्यंत विनम्र तथा कोमल वाणी

बोलीं-॥4॥

*** धन्य धन्य मैं धन्य पुरारी। सुनेउँ राम गुन भव भय हारी॥5॥

भावार्थ:-

हे त्रिपुरारि। मैं धन्य हूँ, धन्य-धन्य हूँ जो मैंने जन्म-मृत्यु के भय को हरण करने वाले श्री रामजी के गुण (चरित्र) सुने॥5॥

दोहा :

*** तुम्हरी कृपाँ कृपायतन अब कृतकृत्य न मोह। जानेउँ राम प्रताप प्रभु चिदानंद संदोह॥52 क॥

भावार्थ:-

हे कृपाधाम। अब आपकी कृपा से मैं कृतकृत्य हो गई। अब मुझे मोह नहीं रह गया। हे प्रभु मैं सच्चिदानंदघन प्रभु श्री रामजी के प्रताप को जान गई॥52 (क)॥

***नाथ तवानन ससि स्रवत कथा सुधा रघुबीर। श्रवन पुटन्हि मन पान करि नहिं अघात मतिधीर॥52 ख॥

भावार्थ:-

हे नाथ! आपका मुख रूपी चंद्रमा श्री रघुवीर की कथा रूपी अमृत बरसाता है। हे मतिधीर मेरा मन कर्णपुटों से उसे पीकर तृप्त नहीं होता॥52 (ख)॥

चौपाई :

*** राम चरित जे सुनत अघाहीं। रस बिसेष जाना तिन्ह नाहीं॥ जीवनमुक्त महामुनि जेऊ। हरि गुन सुनहिं निरंतर तेऊ॥1॥

भावार्थ:-

श्री रामजी के चरित्र सुनते-सुनते जो तृप्त हो जाते हैं (बस कर देते हैं), उन्होंने तो उसका विशेष रस जाना ही नहीं। जो जीवन्मुक्त महामुनि हैं, वे भी भगवान् के गुण निरंतर सुनते रहते हैं॥1॥

*** भव सागर चह पार जो पावा। राम कथा ता कहँ दृढ़ नावा॥ बिषइन्ह कहँ पुनि हरि गुन ग्रामा। श्रवन सुखद अरु मन अभिरामा॥2॥

भावार्थ:-

जो संसार रूपी सागर का पार पाना चाहता है, उसके लिए तो श्री रामजी की कथा दृढ़ नौका के समान है। श्री हरि के गुणसमूह तो विषयी लोगों के लिए भी कानों को सुख देने वाले और मन को आनंद देने वाले हैं॥2॥

*** श्रवनवंत अस को जग माहीं। जाहि न रघुपति चरित सोहाहीं॥ ते जड़ जीव निजात्मक घाती। जिन्हहि न रघुपति कथा सोहाती॥3॥

भावार्थ:-

जगत् में कान वाला ऐसा कौन है, जिसे श्री रघुनाथजी के चरित्र न सुहाते हों। जिन्हें श्री रघुनाथजी की कथा नहीं सुहाती, वे मूर्ख जीव तो अपनी आत्मा की हत्या करने वाले हैं॥3॥

*** हरिचरित्र मानस तुम्ह गावा। सुनि मैं नाथ अमिति सुख पावा॥ तुम्ह जो कही यह कथा सुहाई। कागभुशण्डि गरुड़ प्रति गाई॥4॥

भावार्थ:-

हे नाथ! आपने श्री रामचरित्र मानस का गान किया, उसे सुनकर मैंने अपार सुख पाया। आपने जो यह कहा कि यह सुंदर कथा काकभुशुण्डिजी ने गरुड़जी से कही थी-॥4॥

दोहा :

*** बिरति ग्यान बिग्यान दृढ़ राम चरन अति नेह। बायस तन रघुपति भगति मोहि परम संदेह॥53॥

भावार्थ:-

सो कौए का शरीर पाकर भी काकभुशुण्डि वैराग्य, ज्ञान और विज्ञान में दृढ़ हैं, उनका श्री रामजी के चरणों में अत्यंत प्रेम है और उन्हें श्री रघुनाथजी की भक्ति भी प्राप्त है, इस बात का मुझे परम संदेह हो रहा है॥53॥

चौपाई :

*** नर सहस्र महँ सुनहु पुरारी। कोउ एक होई धर्म ब्रतधारी॥ धर्मसील कोटिक महँ कोई। बिषय बिमुख बिराग रत होई॥1॥

भावार्थ:-

हे त्रिपुरारि! सुनिए, हजारों मनुष्यों में कोई एक धर्म के व्रत का धारण करने वाला होता है और करोड़ों धर्मात्माओं में कोई एक विषय से विमुख (विषयों का त्यागी) और वैराग्य परायण होता है॥1॥

***कोटि बिरक्त मध्य श्रुति कहई। सम्यक ग्यान सकृत कोउ लहई॥ ग्यानवंत कोटिक महँ कोऊ। जीवनमुक्त सकृत जग सोऊ॥2॥

भावार्थ:-

श्रुति कहती है कि करोड़ों विरक्तों में कोई एक ही सम्यक् (यथार्थ) ज्ञान को प्राप्त करता है और करोड़ों ज्ञानियों में कोई एक ही जीवन मुक्त होता है। जगत् में कोई विरला ही ऐसा (जीवन मुक्त) होगा॥2॥

*** तिन्ह सहस्र महुँ सबसुख खानी। दुर्लभ ब्रह्म लीन बिग्यानी॥ धर्मसील बिरक्त अरु ग्यानी। जीवनमुक्त ब्रह्मपर प्रानी॥3॥

भावार्थ:-

हजारों जीवन मुक्तों में भी सब सुखों की खान, ब्रह्म में लीन विज्ञानवान् पुरुष और भी दुर्लभ है। धर्मात्मा, वैराग्यवान्, ज्ञानी, जीवन मुक्त और ब्रह्मलीन-॥3॥

***सत ते सो दुर्लभ सुरराया। राम भगति रत गत मद माया॥ सो हरिभगति काग किमि पाई। बिस्वनाथ मोहि कहहु बुझाई॥4॥

भावार्थ:-

इन सबमें भी हे देवाधिदेव महादेवजी! वह प्राणी अत्यंत दुर्लभ है जो मद और माया से रहित होकर श्री रामजी की भक्ति के परायण हो। हे विश्वनाथ! ऐसी दुर्लभ हरि भक्ति को कौआ कैसे पा गया, मुझे समझाकर कहिए॥4॥

दोहा :

*** राम परायन ग्यान रत गुनागार मति धीर। नाथ कहहु केहि कारन पायउ काक सरीर॥54॥

भावार्थ:-

हे नाथ! कहिए, (ऐसे) श्री रामपरायण, ज्ञाननिरत, गुणधाम और धीरबुद्धि भुशुण्डिजी ने कौए का शरीर किस कारण पाया?॥54॥

चौपाई :

*** यह प्रभु चरित पवित्र सुहावा। कहहु कृपाल काग कहँ पावा॥ तुम्ह केहि भाँति सुना मदनारी। कहहु मोहि अति कौतुक भारी॥1॥

भावार्थ:-

हे कृपालु! बताइए, उस कौए ने प्रभु का यह पवित्र और सुंदर चरित्र कहाँ पाया? और हे कामदेव के शत्रु! यह भी बताइए, आपने इसे किस प्रकार सुना? मुझे बड़ा भारी कौतूहल हो रहा है॥1॥

*** गरुड़ महाग्यानी गुन रासी। हरि सेवक अति निकट निवासी। तेहिं केहि हेतु काग सन जाई। सुनी कथा मुनि निकर बिहाई॥2॥

भावार्थ:-

गरुड़जी तो महान् ज्ञानी, सद्गुणों की राशि, श्री हरि के सेवक और उनके अत्यंत निकट रहने वाले (उनके वाहन ही) हैं। उन्होंने मुनियों के समूह को छोड़कर, कौए से जाकर हरिकथा किस कारण सुनी?॥2॥

*** कहहु कवन बिधि भा संबादा। दोउ हरिभगत काग उरगादा॥ गौरि गिरा सुनि सरल सुहाई। बोले सिव सादर सुख पाई॥3॥

भावार्थ:-

कहिए, काकभुशुण्डि और गरुड़ इन दोनों हरिभक्तों की बातचीत किस प्रकार हुई? पार्वतीजी की सरल, सुंदर वाणी सुनकर शिवजी सुख पाकर आदर के साथ बोले॥3॥

*** धन्य सती पावन मति तोरी। रघुपति चरन प्रीति नहिं थोरी॥ सुनहु परम पुनीत इतिहासा। जो सुनि सकल लोक भ्रम नासा॥4॥

भावार्थ:-

हे सती! तुम धन्य हो, तुम्हारी बुद्धि अत्यंत पवित्र है। श्री रघुनाथजी के चरणों में तुम्हारा कम प्रेम नहीं है। (अत्यधिक प्रेम है)। अब वह परम पवित्र इतिहास सुनो, जिसे सुनने से सारे लोक के भ्रम का नाश हो जाता है॥4॥

***उपजइ राम चरन बिस्वासा। भव निधि तर नर बिनहिं प्रयासा॥5॥

भावार्थ:-

तथा श्री रामजी के चरणों में विश्वास उत्पन्न होता है और मनुष्य बिना ही परिश्रम संसार रूपी समुद्र से तर जाता है॥5॥

दोहा :

*** ऐसिअ प्रस्न बिहंगपति कीन्हि काग सन जाइ। सो सब सादर कहिहउँ सुनहु उमा मन लाई॥55॥

भावार्थ:-

पक्षीराज गरुड़जी ने भी जाकर काकभुशुण्डिजी से प्रायः ऐसे ही प्रश्न किए थे। हे उमा! मैं वह सब आदरसहित कहूँगा, तुम मन लगाकर सुनो॥55॥

चौपाई :

*** मैं जिमि कथा सुनी भव मोचनि। सो प्रसंग सुनु सुमुखि सुलोचनि॥ प्रथम दच्छ गृह तव अवतारा। सती नाम तब रहा तुम्हारा॥1॥

भावार्थ:-

मैंने जिस प्रकार वह भव (जन्म-मृत्यु) से छुड़ाने वाली कथा सुनी, हे सुमुखी! हे सुलोचनी! वह प्रसंग सुनो। पहले तुम्हारा अवतार दक्ष के घर हुआ था। तब तुम्हारा नाम सती था॥1॥

*** दच्छ जग्य तव भा अपमाना। तुम्ह अति क्रोध तजे तब प्राना॥ मम अनुचरन्ह कीन्ह मख भंगा। जानहु तुम्ह सो सकल प्रसंगा॥2॥

भावार्थ:-

दक्ष के यज्ञ में तुम्हारा अपमान हुआ। तब तुमने अत्यंत क्रोध करके प्राण त्याग दिए थे और फिर मेरे सेवकों ने यज्ञ विध्वंस कर दिया था। वह सारा प्रसंग तुम जानती ही हो॥2॥

*** तब अति सोच भयउ मन मोरें। दुखी भयउँ बियोग प्रिय तोरें॥ सुंदर बन गिरि सरित तड़ागा। कौतुक देखत फिरउँ बेरागा॥3॥

भावार्थ:-

तब मेरे मन में बड़ा सोच हुआ और हे प्रिये! मैं तुम्हारे वियोग से दुःखी हो गया। मैं विरक्त भाव से सुंदर वन, पर्वत, नदी और तालाबों का कौतुक (दृश्य) देखता फिरता था॥3॥

*** गिरि सुमेर उत्तर दिसि दूरी। नील सैल एक सुंदर भूरी॥ तासु कनकमय सिखर सुहाए। चारि चारु मोरे मन भाए॥4॥

भावार्थ:-

सुमेरु पर्वत की उत्तर दिशा में और भी दूर, एक बहुत ही सुंदर नील पर्वत है। उसके सुंदर स्वर्णमय शिखर हैं, (उनमें से) चार सुंदर शिखर मेरे मन को बहुत ही अच्छे लगे॥4॥

*** तिन्ह पर एक एक बिटप बिसाला। बट पीपर पाकरी रसाला॥ सैलोपरि सर सुंदर सोहा। मनि

सोपान देखि मन मोहा॥5॥

भावार्थ:-

उन शिखरों में एक-एक पर बरगद, पीपल, पाकर और आम का एक-एक विशाल वृक्ष है। पर्वत के ऊपर एक सुंदर तालाब शोभित है, जिसकी मणियों की सीढ़ियाँ देखकर मन मोहित हो जाता है॥5॥

दोहा :

*** सीतल अमल मधुर जल जलज बिपुल बहुरंग। कूजत कल रव हंस गन गुंजत मंजुल भृंग॥56॥

भावार्थ:-

उसका जल शीतल, निर्मल और मीठा है, उसमें रंग-बिरंगे बहुत से कमल खिले हुए हैंहंसगण मधुर स्वर से बोल रहे हैं और भौंरे सुंदर गुंजार कर रहे हैं॥56॥

चौपाई :

*** तेहिं गिरि रुचिर बसइ खग सोई। तासु नास कल्पांत न होई॥ माया कृत गुन दोष अनेका। मोह मनोज आदि अबिबेका॥1॥

भावार्थ:-

उस सुंदर पर्वत पर वही पक्षी (काकभुशुण्डि) बसता है। उसका नाश कल्प के अंत में भी नहीं होता। मायारचित अनेकों गुण-दोष, मोह, काम आदि अविवेक,॥1॥

*** रहे ब्यापि समस्त जग माहीं। तेहि गिरि निकट कबहुँ नहिं जाहीं॥ तहँ बसि हरिहि भजइ जिमि कागा। सो सुनु उमा सहित अनुरागा॥2॥

भावार्थ:-

जो सारे जगत् में छा रहे हैं, उस पर्वत के पास भी कभी नहीं फटकते। वहाँ बसकर जिस प्रकार वह काग हरि को भजता है, हे उमा! उसे प्रेम सहित सुनो॥2॥

***पीपर तरु तर ध्यान सो धरई। जाप जग्य पाकरि तर करई॥ अँब छाँह कर मानस पूजा। तजि हरि भजनु काजु नहिं दूजा॥3॥

भावार्थ:-

वह पीपल के वृक्ष के नीछे ध्यान धरता है। पाकर के नीचे जपयज्ञ करता है। आम की छाया में मानसिक पूजा करता है। श्री हरि के भजन को छोड़कर उसे दूसरा कोई काम नहीं है॥3॥

*** बर तर कह हरि कथा प्रसंगा। आवहिं सुनहिं अनेक बिहंगा॥ राम चरित बिचित्र बिधि नाना। प्रेम सहित कर सादर गाना॥4॥

भावार्थ:-

बरगद के नीचे वह श्री हरि की कथाओं के प्रसंग कहता है। वहाँ अनेकों पक्षी आते और कथा सुनते हैं। वह विचित्र रामचरित्र को अनेकों प्रकार से प्रेम सहित आदरपूर्वक गान करता है॥4॥

***सुनहिं सकल मति बिमल मराला। बसहिं निरंतर जे तेहिं ताला॥ जब मैं जाइ सो कौतुक देखा। उर उपजा आनंद बिसेषा॥5॥

भावार्थ:-

सब निर्मल बुद्धि वाले हंस, जो सदा उस तालाब पर बसते हैं, उसे सुनते हैं। जब मैंने वहाँ जाकर यह कौतुक (दृश्य) देखा, तब मेरे हृदय में विशेष आनंद उत्पन्न हुआ॥5॥

दोहा :

*** तब कछु काल मराल तनु धरि तहँ कीन्ह निवास। सादर सुनि रघुपति गुन पुनि आयउँ कैलास॥57॥

भावार्थ:-

तब मैंने हंस का शरीर धारण कर कुछ समय वहाँ निवास किया और श्री रघुनाथजी के गुणों को आदर सहित सुनकर फिर कैलास को लौट आया॥57॥

चौपाई :

*** गिरिजा कहेउँ सो सब इतिहासा। मैं जेहि समय गयउँ खग पासा॥ अब सो कथा सुनहु जेहि हेतु। गयउ काग पहिं खग कुल केतू॥1॥

भावार्थ:-

हे गिरिजे! मैंने वह सब इतिहास कहा कि जिस समय मैं काकभुशुण्डि के पास गया था। अब वह कथा सुनो जिस कारण से पक्षी कुल के ध्वजा गरुड़जी उस काग के पास गए थे॥1॥

*** जब रघुनाथ कीन्हि रन क्रीड़ा। समुझत चरित होति मोहि ब्रीड़ा॥ इंद्रजीत कर आपु बँधायो। तब नारद मुनि गरुड़ पठायो॥2॥

भावार्थ:-

जब श्री रघुनाथजी ने ऐसी रणलीला की जिस लीला का स्मरण करने से मुझे लज्जा होती है- मेघनाद के हाथों अपने को बँधा लिया, तब नारद मुनि ने गरुड़ को भेजा॥2॥

*** बंधन काटि गयो उरगादा। उपजा हृदयँ प्रचंड बिषादा॥ प्रभु बंधन समुझत बहु भाँती। करत बिचार उरग आराती॥3॥

भावार्थ:-

सर्पों के भक्षक गरुड़जी बंधन काटकर गए, तब उनके हृदय में बड़ा भारी विषाद उत्पन्न हुआ। प्रभु के बंधन को स्मरण करके सर्पों के शत्रु गरुड़जी बहुत प्रकार से विचार करने लगे॥3॥

*** ब्यापक ब्रह्म बिरज बागीसा। माया मोह पार परमीसा॥ सो अवतार सुनेउँ जग माहीं। देखेउँ सो प्रभाव कछु नाहीं॥4॥

भावार्थ:-

जो व्यापक, विकाररहित, वाणी के पति और माया-मोह से परे ब्रह्म परमेश्वर हैं, मैंने सुना था कि जगत् में उन्हीं का अवतार है। पर मैंने उस (अवतार) का प्रभाव कुछ भी नहीं देखा॥4॥

दोहा :

***भव बंधन ते छूटहिं नर जपि जा कर नाम। खर्ब निसाचर बाँधेउ नागपास सोइ राम॥58॥

भावार्थ:-

जिनका नाम जपकर मनुष्य संसार के बंधन से छूट जाते हैं, उन्हीं राम को एक तुच्छ राक्षस ने नागपाश से बाँध लिया॥58॥

चौपाई :

*** नाना भाँति मनहिं समुझावा। प्रगट न ग्यान हृदयँ भ्रम छावा॥ खेद खिन्न मन तर्क बढ़ाई। भयउ मोहबस तुम्हरिहिं नाई॥1॥

भावार्थ:-

गरुड़जी ने अनेकों प्रकार से अपने मन को समझाया। पर उन्हें ज्ञान नहीं हुआ, हृदय में भ्रम और भी अधिक छा गया। (संदेहजनित) दुःख से दुःखी होकर, मन में कुतर्क बढ़ाकर वे तुम्हारी ही भाँति मोहवश हो गए॥1॥

*** ब्याकुल गयउ देवरिषि पाहीं। कहेसि जो संसय निज मन माहीं॥ सुनि नारदहि लागि अति दाया। सुनु खग प्रबल राम कै माया॥2॥

भावार्थ:-

व्याकुल होकर वे देवर्षि नारदजी के पास गए और मन में जो संदेह था, वह उनसे कहा। उसे सुनकर नारद को अत्यंत दया आई। (उन्होंने कहा-) हे गरुड़! सुनिए! श्री रामजी की माया बड़ी ही बलवती है॥2॥

*** जो ग्यानिन्ह कर चित अपहरई। बरिआईं बिमोह मन करई॥ जेहिं बहु बार नचावा मोही। सोइ ब्यापी बिहंगपति तोही॥3॥

भावार्थ:-

जो ज्ञानियों के चित्त को भी भली भाँति हरण कर लेती है और उनके मन में जबर्दस्ती बड़ा भारी मोह उत्पन्न कर देती है तथा जिसने मुझको भी बहुत बार नचाया है हे पक्षीराज! वही माया आपको भी व्याप गई है॥3॥

*** महामोह उपजा उर तोरें। मिटिहि न बेगि कहें खग मोरें॥ चतुरानन पहिं जाहु खगेसा। सोइ करेहु जेहि होई निदेसा॥4॥

भावार्थ:-

हे गरुड़! आपके हृदय में बड़ा भारी मोह उत्पन्न हो गया है। यह मेरे समझाने से तुरंत नहीं मिटेगा। अतः हे पक्षीराज! आप ब्रह्माजी के पास जाइए और वहाँ जिस काम के लिए आदेश मिले, वही कीजिएगा॥4॥

दोहा :

*** अस कहि चले देवरिषि करत राम गुन गान। हरि माया बल बरनत पुनि पुनि परम

सुजान॥59॥

भावार्थ:-

ऐसा कहकर परम सुजान देवर्षि नारदजी श्री रामजी का गुणगान करते हुए और बारंबार श्री हरि की माया का बल वर्णन करते हुए चले॥59॥

चौपाई :

*** तब खगपति बिरंचि पहिं गयऊ। निज संदेह सुनावत भयऊ॥ सुनि बिरंचि रामहि सिरु नावा। समुझि प्रताप प्रेम अति छावा॥1॥

भावार्थ:-

तब पक्षीराज गरुड़ ब्रह्माजी के पास गए और अपना संदेह उन्हें कह सुनाया। उसे सुनकर ब्रह्माजी ने श्री रामचंद्रजी को सिर नवाया और उनके प्रताप को समझकर उनके मन में अत्यंत प्रेम छा गया॥1॥

*** हरि माया कर अमिति प्रभावा। बिपुल बार जेहिं मोहि नचावा॥2॥

भावार्थ:-

ब्रह्माजी मन में विचार करने लगे कि कवि, कोविद और ज्ञानी सभी माया के वश हैं। भगवान् की माया का प्रभाव असीम है, जिसने मुझ तक को अनेकों बार नचाया है॥2॥

*** अग जगमय जग मम उपराजा। नहिं आचरज मोह खगराजा॥ तब बोले बिधि गिरा सुहाई। जान महेस राम प्रभुताई॥3॥

भावार्थ:-

यह सारा चराचर जगत् तो मेरा रचा हुआ है। जब मैं ही मायावश नाचने लगता हूँ तब गरुड़ को मोह होना कोई आश्चर्य (की बात) नहीं है। तदनन्तर ब्रह्माजी सुंदर वाणी बोले- श्री रामजी की महिमा को महादेवजी जानते हैं॥3॥

*** बैनतेय संकर पहिं जाहू। तात अनत पूछहु जनि काहू॥ तहँ होइहितव संसय हानी। चलेउ बिहंग सुनत बिधि बानी॥4॥

भावार्थ:-

हे गरुड़! तुम शंकरजी के पास जाओ। हे तात! और कहीं किसी से न पूछना। तुम्हारे संदेह का नाश वहीं होगा। ब्रह्माजी का वचन सुनते ही गरुड़ चल दिए॥4॥

दोहा :

*** परमातुर बिहंगपति आयउ तब मो पास। जात रहेउँ कुबेर गृह रहिहु उमा कैलास॥60॥

भावार्थ:-

तब बड़ी आतुरता (उतावली) से पक्षीराज गरुड़ मेरे पास आए। हे उमा! उस समय मैं कुबेर के घर जा रहा था और तुम कैलास पर थीं॥60॥

चौपाई :

*** तेहिं मम पद सादर सिरु नावा। पुनि आपन संदेह सुनावा॥ सुनि ता करि बिनती मृदु बानी। प्रेम सहित मैं कहेउँ भवानी॥1॥

भावार्थ:-

गरुड़ ने आदरपूर्वक मेरे चरणों में सिर नवाया और फिर मुझको अपना संदेह सुनाया। हे भवानी! उनकी विनती और कोमल वाणी सुनकर मैंने प्रेमसहित उनसे कहा-॥1॥

*** मिलेहु गरुड़ मारग महँ मोही। कवन भाँति समुझावौं तोही॥ तबहिं होइ सब संसय भंगा। जब बहु काल करिअ सतसंगा॥2॥

भावार्थ:-

हे गरुड़! तुम मुझे रास्ते में मिले हो। राह चलते मैं तुम्हे किस प्रकार समझाऊँ? सब संदेहों का तो तभी नाश हो जब दीर्घ काल तक सत्संग किया जाए॥2॥

*** सुनिअ तहाँ हरिकथा सुहाई। नाना भाँति मुनिन्ह जो गाई॥ जेहि महुँ आदि मध्यअवसाना। प्रभु प्रतिपाद्य राम भगवाना॥3॥

भावार्थ:-

और वहाँ (सत्संग में) सुंदर हरिकथा सुनी जाए जिसे मुनियों ने अनेकों प्रकार से गाया है और जिसके आदि, मध्य और अंत में भगवान् श्री रामचंद्रजी ही प्रतिपाद्य प्रभु हैं॥3॥

*** नित हरि कथा होत जहँ भाई। पठवउँ तहाँ सुनहु तुम्ह जाई॥ जाइहि सुनत सकल संदेहा। राम चरन होइहि अति नेहा॥4॥

भावार्थ:-

हे भाई! जहाँ प्रतिदिन हरिकथा होती है, तुमको मैं वहीं भेजता हूँ, तुम जाकर उसे सुनो। उसे सुनते ही तुम्हारा सब संदेह दूर हो जाएगा और तुम्हें श्री रामजी के चरणों में अत्यंत प्रेम होगा॥4॥

दोहा :

*** बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग। मोह गएँ बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग॥61॥

भावार्थ:-

सत्संग के बिना हरि की कथा सुनने को नहीं मिलती, उसके बिना मोह नहीं भागता और मोह के गए बिना श्री रामचंद्रजी के चरणों में दृढ़ (अचल) प्रेम नहीं होता॥61॥

चौपाई :

*** मिलहिं न रघुपति बिनु अनुरागा। किएँ जोग तप ग्यान बिरागा॥ उत्तर दिसि सुंदर गिरि नीला। तहँ रह काकभुसुण्डि सुसीला॥1॥

भावार्थ:-

बिना प्रेम के केवल योग, तप, ज्ञान और वैराग्यादि के करने से श्री रघुनाथजी नहीं मिलते। (अतएव तुम सत्संग के लिए वहाँ जाओ जहाँ) उत्तर दिशा में एक सुंदर नील पर्वत है। वहाँ परम

सुशील काकभुशुण्डिजी रहते हैं॥1॥

***राम भगति पथ परम प्रबीना। ग्यानी गुन गृह बहु कालीना॥ राम कथा सो कहइ निरंतर। सादर सुनहिं बिबिध बिहंगबर॥2॥

भावार्थ:-

वे रामभक्ति के मार्ग में परम प्रवीण हैं, ज्ञानी हैं, गुणों के धाम हैं और बहुत काल के हैं। वे निरंतर श्री रामचंद्रजी की कथा कहते रहते हैं, जिसे भाँति-भाँति के श्रेष्ठ पक्षी आदर सहित सुनते हैं॥2॥

*** जाइ सुनहु तहँ हरि गुन भूरी। होइहि मोह जनित दुख दूरी॥ मैं जब तेहि सब कहा बुझाई। चलेउ हरषि मम पद सिरु नाई॥3॥

भावार्थ:-

वहाँ जाकर श्री हरि के गुण समूहों को सुनो। उनके सुनने से मोह से उत्पन्न तुम्हारा दुःख दूर हो जाएगा। मैंने उसे जब सब समझाकर कहा, तब वह मेरे चरणों में सिर नवाकर हर्षित होकर चला गया॥3॥

*** ताते उमा न मैं समुझावा। रघुपति कृपाँ मरमु मैं पावा॥ होइहि कीन्ह कबहुँ अभिमाना। सो खोवै चह कृपानिधाना॥4॥

भावार्थ:-

हे उमा! मैंने उसको इसीलिए नहीं समझाया कि मैं श्री रघुनाथजी की कृपा से उसका मर्म (भेद) पा गया था। उसने कभी अभिमान किया होगा, जिसको कृपानिधान श्री रामजी नष्ट करना चाहते हैं॥4॥

*** कछु तेहि ते पुनि मैं नहिं राखा। समुझइ खग खगही कै भाषा॥ प्रभु माया बलवंत भवानी। जाहि न मोह कवन अस ग्यानी॥5॥

भावार्थ:-

फिर कुछ इस कारण भी मैंने उसको अपने पास नहीं रखा कि पक्षी पक्षी की ही बोली समझते हैं। हे भवानी! प्रभु की माया (बड़ी ही) बलवती है, ऐसा कौन ज्ञानी है, जिसे वह न मोह ले?॥5॥

दोहा :

*** ग्यानी भगत सिरोमनि त्रिभुवनपति कर जान। ताहि मोह माया नर पावँर करहिं गुमान॥62 क॥

भावार्थ:-

जो ज्ञानियों में और भक्तों में शिरोमणि हैं एवं त्रिभुवनपति भगवान् के वाहन हैं, उन गरुड़ को भी माया ने मोह लिया। फिर भी नीच मनुष्य मूर्खतावश घमंड किया करते हैं॥62 (क)॥

*** सिव बिरंचि कहुँ मोहइ को है बपुरा आन। अस जियँ जानि भजहिं मुनि माया पति भगवान॥62 ख॥

भावार्थ:-

यह माया जब शिवजी और ब्रह्माजी को भी मोह लेती है, तब दूसरा बेचारा क्या चीज है? जी में ऐसा जानकर ही मुनि लोग उस माया के स्वामी भगवान् का भजन करते हैं॥62 (ख)॥

चौपाई :

*** गयउ गरुड़ जहँ बसइ भुसुण्डा। मति अकुंठ हरि भगति अखंडा॥ देखि सैल प्रसन्न मन भयउ। माया मोह सोच सब गयऊ॥1॥

भावार्थ:-

गरुड़जी वहाँ गए जहाँ निर्बाध बुद्धि और पूर्ण भक्ति वाले काकभुशुण्डि बसते थे। उस पर्वत को देखकर उनका मन प्रसन्न हो गया और (उसके दर्शन से ही) सब माया, मोह तथा सोच जाता रहा॥1॥

*** करि तड़ाग मज्जन जलपाना। बट तर गयउ हृदयँ हरषाना॥ बृद्ध बृद्ध बिहंग तहँ आए। सुनै राम के चरित सुहाए॥2॥

भावार्थ:-

तालाब में स्नान और जलपान करके वे प्रसन्नचित्त से वटवृक्ष के नीचे गए। वहाँ श्री रामजी के सुंदर चरित्र सुनने के लिए बूढ़ेबूढ़े पक्षी आए हुए थे॥2॥

***कथा अरंभ करै सोइ चाहा। तेही समय गयउ खगनाहा॥ आवत देखि सकल खगराजा। हरषेउ बायस सहित समाजा॥3॥

भावार्थ:-

भुशुण्डिजी कथा आरंभ करना ही चाहते थे कि उसी समय पक्षीराज गरुड़जी वहाँ जा पहुँचे। पक्षियों के राजा गरुड़जी को आते देखकर काकभुशुण्डिजी सहित सारा पक्षी समाज हर्षित हुआ॥3॥

*** अति आदर खगपति कर कीन्हा। स्वागत पूछि सुआसन दीन्हा॥ करि पूजा समेत अनुरागा। मधुर बचन तब बोलेउ कागा॥4॥

भावार्थ:-

उन्होंने पक्षीराज गरुड़जी का बहुत ही आदर-सत्कार किया और स्वागत (कुशल) पूछकर बैठने के लिए सुंदर आसन दिया। फिर प्रेम सहित पूजा कर के कागभुशुण्डिजी मधुर वचन बोले॥4॥

दोहा :

*** नाथ कृतारथ भयउँ मैं तव दरसन खगराज। आयसु देहु सो करौं अब प्रभु आयहु केहि काज॥63 क॥

भावार्थ:-

हे नाथ ! हे पक्षीराज ! आपके दर्शन से मैं कृतार्थ हो गया। आप जो आज्ञा दें मैं अब वही करूँ। हे प्रभो ! आप किस कार्य के लिए आए हैं ?॥63 (क)॥

*** सदा कृतारथ रूप तुम्ह कह मृदु बचन खगेस।॥ जेहि कै अस्तुति सादर निज मुख कीन्ह महेस॥63 ख॥

भावार्थ:-

पक्षीराज गरुड़जी ने कोमल वचन कहे- आप तो सदा ही कृतार्थ रूप हैं, जिनकी बड़ाई स्वयं महादेवजी ने आदरपूर्वक अपने श्रीमुख से की है॥63 (ख)॥

चौपाई :

*** सुनहु तात जेहि कारन आयउँ। सो सब भयउ दरस तव पायउँ॥ देखि परम पावन तव आश्रम। गयउ मोह संसय नाना भ्रम॥1॥

भावार्थ:-

हे तात! सुनिए, मैं जिस कारण से आया था, वह सब कार्य तो यहाँ आते ही पूरा हो गया। फिर आपके दर्शन भी प्राप्त हो गए। आपका परम पवित्र आश्रम देखकर ही मेरा मोह संदेह और अनेक प्रकार के भ्रम सब जाते रहे॥1॥

*** अब श्रीराम कथा अति पावनि। सदा सुखद दुख पुंज नसावनि॥ सादर तात सुनावहु मोही। बार बार बिनवउँ प्रभु तोही॥2॥

भावार्थ:-

अब हे तात! आप मुझे श्री रामजी की अत्यंत पवित्र करने वाली, सदा सुख देने वाली और दुःख समूह का नाश करने वाली कथा सादर सहित सुनाएँ। हे प्रभो! मैं बार-बार आप से यही विनती करता हूँ॥2॥

*** सुनत गरुड़ कै गिरा बिनीता। सरल सुप्रेम सुखद सुपुनीता॥ भयउ तास मन परम उछाहा। लाग कहै रघुपति गुन गाहा॥3॥

भावार्थ:-

गरुड़जी की विनम्र, सरल, सुंदर प्रेमयुक्त, सुप्रद और अत्यंत पवित्र वाणी सुनते ही भुशण्डिजी के मन में परम उत्साह हुआ और वे श्री रघुनाथजी के गुणों की कथा कहने लगे॥3॥

*** प्रथमहिं अति अनुराग भवानी। रामचरित सर कहेसि बखानी॥ पुनि नारद कर मोह अपारा। कहेसि बहुरि रावन अवतारा॥4॥

भावार्थ:-

हे भवानी! पहले तो उन्होंने बड़े ही प्रेम से रामचरित मानस सरोवर का रूपक समझाकर कहा। फिर नारदजी का अपार मोह और फिर रावण का अवतार कहा॥4॥

*** प्रभु अवतार कथा पुनि गाई। तब सिसु चरित कहेसि मन लाई॥5॥

भावार्थ:-

फिर प्रभु के अवतार की कथा वर्णन की। तदनन्तर मन लगाकर श्री रामजी की बाल लीलाएँ कहीं॥5॥

दोहा :

*** बालचरित कहि बिबिधि बिधि मन महँ परम उछाह। रिषि आगवन कहेसि पुनि श्रीरघुबीर बिबाह॥64॥

भावार्थ:-

मन में परम उत्साह भरकर अनेकों प्रकार की बाल लीलाएँ कहकर, फिर ऋषि विश्वामित्रजी का अयोध्या आना और श्री रघुवीरजी का विवाह वर्णन किया॥64॥

चौपाई :

*** बहुरि राम अभिषेक प्रसंगा। पुनि नृप बचन राज रस भंगा॥ पुरबासिन्ह कर बिरह बिषादा। कहेसि राम लछिमन संबादा॥1॥

भावार्थ:-

फिर श्री रामजी के राज्याभिषेक का प्रसंग फिर राजा दशरथजी के वचन से राजरस (राज्याभिषेक के आनंद) में भंग पड़ना, फिर नगर निवासियों का विरह, विषाद और श्री राम-लक्ष्मण का संवाद (बातचीत) कहा॥1॥

*** बिपिन गवन केवट अनुरागा। सुरसरि उतरि निवास प्रयागा॥ बालमीक प्रभु मिलन बखाना। चित्रकूट जिमि बसे भगवाना॥2॥

भावार्थ:-

श्री राम का वनगमन, केवट का प्रेम, गंगाजी से पार उतरकर प्रयाग में निवास, वाल्मीकिजी और प्रभु श्री रामजी का मिलन और जैसे भगवान् चित्रकूट में बसे, वह सब कहा॥2॥

*** सचिवागवन नगर नृप मरना। भरतागवन प्रेम बहु बरना॥ करि नृप क्रिया संग पुरबासी। भरत गए जहाँ प्रभु सुख रासी॥3॥

भावार्थ:-

फिर मंत्री सुमंत्रजी का नगर में लौटना, राजा दशरथजी का मरण, भरतजी का (ननिहाल से) अयोध्या में आना और उनके प्रेम का बहुत वर्णन किया। राजा की अन्त्येष्टि क्रिया करके नगर निवासियों को साथ लेकर भरतजी वहाँ गए जहाँ सुख की राशि प्रभु श्री रामचंद्रजी थे॥3॥

*** पुनि रघुपति बहु बिधि समुझाए। लै पादुका अवधपुर आए॥ भरत रहनि सुरपति सुत करनी। प्रभु अरु अत्रि भेंट पुनि बरनी॥4॥

भावार्थ:-

फिर श्री रघुनाथजी ने उनको बहुत प्रकार से समझाया, जिससे वे खड़ाऊँ लेकर अयोध्यापुरी लौट आए, यह सब कथा कही। भरतजी की नन्दीग्राम में रहने की रीति, इंद्रपुत्र जयंत की नीच करनी और फिर प्रभु श्री रामचंद्रजी और अत्रिजी का मिलाप वर्णन किया॥4॥

दोहा :

*** कहि बिराध बध जेहि बिधि देह तजी सरभंग। बरनि सुतीछन प्रीति पुनि प्रभ अगस्ति

सतसंग॥65॥

भावार्थ:-

जिस प्रकार विराध का वध हुआ और शरभंगजी ने शरीर त्याग किया, वह प्रसंग कहकर, फिर सुतीक्ष्णजी का प्रेम वर्णन करके प्रभु और अगस्त्यजी का सत्संग वृत्तान्त कहा॥65॥

चौपाई :

*** कहि दंडक बन पावनताई। गीध मइत्री पुनि तेहिं गाई॥ पुनि प्रभु पंचबटीं कृत बासा। भंजी सकल मुनिन्ह की त्रासा॥1॥

भावार्थ:-

दंडकवन का पवित्र करना कहकर फिर भुशुण्डिजी ने गृध्रराज के साथ मित्रता का वर्णन किया। फिर जिस प्रकार प्रभु ने पंचवटी में निवास किया और सब मुनियों के भय का नाश किया,॥1॥

*** पुनि लछिमन उपदेस अनूपा। सूपनखा जिमि कीन्हि कुरूपा॥ खर दूषन बध बहुरि बखाना। जिमि सब मरमु दसानन जाना॥2॥

भावार्थ:-

और फिर जैसे लक्ष्मणजी को अनुपम उपदेश दिया और शूर्पणखा को कुरूप किया, वह सब वर्णन किया। फिर खर-दूषण वध और जिस प्रकार रावण ने सब समाचार जाना, वह बखानकर कहा,॥2॥

*** दसकंधर मारीच बतकही। जेहि बिधि भई सो सब तेहिं कही॥ पुनि माया सीता कर हरना। श्रीरघुबीर बिरह कछु बरना॥3॥

भावार्थ:-

तथा जिस प्रकार रावण और मारीच की बातचीत हुई, वह सब उन्होंने कही। फिर माया सीता का हरण और श्री रघुवीर के विरह का कुछ वर्णन किया॥3॥

*** पुनि प्रभु गीध क्रिया जिमि कीन्हीं। बधि कबंध सबरिहि गति दीन्ही॥ बहुरि बिरह बरनत रघुबीरा। जेहि बिधि गए सरोबर तीरा॥4॥

भावार्थ:-

फिर प्रभु ने गिद्ध जटायु की जिस प्रकार क्रिया की, कबन्ध का वध करके शबरी को परमगति दी और फिर जिस प्रकार विरह वर्णन करते हुए श्री रघुवीरजी पंपासर के तीर पर गए, वह सब कहा॥4॥

दोहा :

*** प्रभु नारद संबाद कहि मारुति मिलन प्रसंग। पुनि सुग्रीव मिताई बालि प्रान कर भंग॥66 क॥

भावार्थ:-

प्रभु और नारदजी का संवाद और मारुति के मिलने का प्रसंग कहकर फिर सुग्रीव से मित्रता और बालि के प्राणनाश का वर्णन किया॥66 (क)॥

*** कपिहि तिलक करि प्रभु कृत सैल प्रबरषन बास। बरनन बर्षा सरद अरु राम रोष कपि त्रास॥66 ख॥

भावार्थ:-

सुग्रीव का राजतिलक करके प्रभु ने प्रवर्षण पर्वत पर निवास किया, वह तथा वर्षा और शरद् का वर्णन, श्री रामजी का सुग्रीव पर रोष और सुग्रीव का भय आदि प्रसंग कहे॥66 (ख)॥

चौपाई :

*** जेहि बिधि कपिपति कीस पठाए। सीता खोज सकल दिदि धाए॥ बिबर प्रबेस कीन्ह जेहि भाँति। कपिन्ह बहोरि मिला संपाती॥1॥

भावार्थ:-

जिस प्रकार वानरराज सुग्रीव ने वानरों को भेजा और वे सीताजी की खोज में जिस प्रकार सब दिशाओं में गए, जिस प्रकार उन्होंने बिल में प्रवेश किया और फिर जैसे वानरों को सम्पाती मिला, वह कथा कही॥1॥

*** सुनि सब कथा समीरकुमारा। नाघत भयउ पयोधि अपारा॥ लंकाँ कपि प्रबेस जिमि कीन्हा। पुनि सीतहि धीरजु जिमि दीन्हा॥2॥

भावार्थ:-

सम्पाती से सब कथा सुनकर पवनपुत्र हनुमान्‌जी जिस तरह अपार समुद्र को लाँघ गए, फिर हनुमान्‌जी ने जैसे लंका में प्रवेश किया और फिर जैसे सीताजी को धीरज दिया, सो सब कहा॥2॥

*** बन उजारि रावनहि प्रबोधी। पुर दहि नाघेउ बहुरि पयोधी॥ आए कपि सब जहँ रघुराई। बैदेही की कुसल सुनाई॥3॥

भावार्थ:-

अशोक वन को उजाड़कर, रावण को समझाकर, लंकापुरी को जलाकर फिर जैसे उन्होंने समुद्र को लाँघा और जिस प्रकार सब वानर वहाँ आए जहाँ श्री रघुनाथजी थे और आकर श्री जानकीजी की कुशल सुनाई,॥3॥

*** सेन समेति जथा रघुबीरा। उतरे जाइ बारिनिधि तीरा॥ मिला बिभीषन जेहि बिधि आई। सागर निग्रह कथा सुनाई॥4॥

भावार्थ:-

फिर जिस प्रकार सेना सहित श्री रघुवीर जाकर समुद्र के तट पर उतरे और जिस प्रकार विभीषणजी आकर उनसे मिले, वह सब और समुद्र के बाँधने की कथा उसने सुनाई॥4॥

दोहा :

*** सेतु बाँधि कपि सेन जिमि उतरी सागर पार। गयउ बसीठी बीरबर जेहि बिधि बालिकुमार॥67 क॥

भावार्थ:-

पुल बाँधकर जिस प्रकार वानरों की सेना समुद्र के पार उतरी और जिस प्रकार वीर श्रेष्ठ बालिपुत्र अंगद दूत बनकर गए वह सब कहा॥67 (क)॥

*** निसिचर कीस लराई बरनिसि बिबिध प्रकार। कुंभकरन घननाद कर बल पौरुष संघार॥67 ख॥

भावार्थ:-

फिर राक्षसों और वानरों के युद्ध का अनेकों प्रकार से वर्णन किया। फिर कुंभकर्ण और मेघनाद के बल, पुरुषार्थ और संहार की कथा कही॥67 (ख)॥

चौपाई :

*** निसिचर निकर मरन बिधि नाना। रघुपति रावन समर बखाना॥ रावन बध मंदोदरि सोका। राज बिभीषन देव असोका॥1॥

भावार्थ:-

नाना प्रकार के राक्षस समूहों के मरण तथा श्री रघुनाथजी और रावण के अनेक प्रकार के युद्ध का वर्णन किया। रावण वध, मंदोदरी का शोक, विभीषण का राज्याभिषेक और देवताओं का शोकरहित होना कहकर,॥1॥

*** सीता रघुपति मिलन बहोरी। सुरन्ह कीन्हि अस्तुति कर जोरी॥ पुनि पुष्पक चढ़ि कपिन्ह समेता। अवध चले प्रभु कृपा निकेता॥2॥

भावार्थ:-

फिर सीताजी और श्री रघुनाथजी का मिलाप कहा। जिस प्रकार देवताओं ने हाथ जोड़कर स्तुति की और फिर जैसे वानरों समेत पुष्पक विमान पर चढ़कर कृपाधाम प्रभु अवधपुरी को चले वह कहा॥2॥

*** जेहि बिधि राम नगर निज आए। बायस बिसद चरित सब गाए॥ कहेसि बहोरि राम अभिषेका। पुर बरनत नृपनीति अनेका॥3॥

भावार्थ:-

जिस प्रकार श्री रामचंद्रजी अपने नगर (अयोध्या) में आए, वे सब उज्ज्वल चरित्र काकभुशुण्डिजी ने विस्तारपूर्वक वर्णन किए। फिर उन्होंने श्री रामजी का राज्याभिषेक कहा। (शिवजी कहते हैं-) अयोध्यापुरी का और अनेक प्रकार की राजनीति का वर्णन करते हुए॥3॥

*** कथा समस्त भुसुंड बखानी। जो मैं तुम्ह सन कही भवानी॥ सुनि सब राम कथा खगनाहा। कहत बचन मन परम उछाहा॥4॥

भावार्थ:-

भुशुण्डिजी ने वह सब कथा कही जो हे भवानी! मैंने तुमसे कही। सारी रामकथा सुनकर गरुड़जी मन में बहुत उत्साहित (आनंदित) होकर वचन कहने लगे-॥4॥

सोरठा :

*** गयउ मोर संदेह सुनेउँ सकल रघुपति चरित। भयउ राम पद नेह तव प्रसाद बायस

तिलक॥68 क॥

भावार्थ:-

श्री रघुनाथजी के सब चरित्र मैंने सुने, जिससे मेरा संदेह जाता रहा। हे काकशिरोमणि! आपके अनुग्रह से श्री रामजी के चरणों में मेरा प्रेम हो गया॥68 (क)॥

***मोहि भयउ अति मोह प्रभु बंधन रन महुँ निरखि। चिदानंद संदोह राम बिकल कारन कवन॥68 ख॥

भावार्थ:-

युद्ध में प्रभु का नागपाश से बंधन देखकर मुझे अत्यंत मोह हो गया था कि श्री रामजी तो सच्चिदानंदघन हैं, वे किस कारण व्याकुल हैं॥68 (ख)॥

चौपाई :

*** देखि चरित अति नर अनुसारी। भयउ हृदयँ मम संसय भारी॥ सोई भ्रम अब हित करि मैं माना। कीन्ह अनुग्रह कृपानिधाना॥1॥

भावार्थ:-

बिलकुल ही लौकिक मनुष्यों का सा चरित्र देखकर मेरे हृदय में भारी संदेह हो गया। मैं अब उस भ्रम (संदेह) को अपने लिए हित करके समझता हूँ। कृपानिधान ने मुझ पर यह बड़ा अनुग्रह किया॥1॥

*** जो अति आतप ब्याकुल होई। तरु छाया सुख जानइ सोई॥ जौं नहिं होत मोह अति मोही। मिलतेउँ तात कवन बिधि तोही॥2॥

भावार्थ:-

जो धूप से अत्यंत व्याकुल होता है, वही वृक्ष की छाया का सुख जानता है। हे तात! यदि मुझे अत्यंत मोह न होता तो मैं आपसे किस प्रकार मिलता?॥2॥

*** सुनतेउँ किमि हरि कथा सुहाई। अति बिचित्र बहु बिधि तुम्ह गाई॥ निगमागम पुरान मत एहा। कहहिं सिद्ध मुनि नहिं संदेहा॥3॥

भावार्थ:-

और कैसे अत्यंत विचित्र यह सुंदर हरिकथा सुनता, जो आपने बहुत प्रकार से गाई है? वेद, शास्त्र और पुराणों का यही मत है, सिद्ध और मुनि भी यही कहते हैं, इसमें संदेह नहीं कि-॥3॥

*** संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही। चितवहिं राम कृपा करि जेही॥ राम कपाँ तव दरसन भयऊ। तव प्रसाद सब संसय गयऊ॥4॥

भावार्थ:-

शुद्ध (सच्चे) संत उसी को मिलते हैं, जिसे श्री रामजी कृपा करके देखते हैं। श्री रामजी की कृपा से मुझे आपके दर्शन हुए और आपकी कृपा से मेरा संदेह चला गया॥4॥

दोहा :

***सुनि बिहंगपति बानी सहित बिनय अनुराग। पुलक गात लोचन सजल मन हरषेउ अति काग॥69 क॥

भावार्थ:-

पक्षीराज गरुड़जी की विनय और प्रेमयुक्त वाणी सुनकर काकभुशुण्डिजी का शरीर पुलकित हो गया, उनके नेत्रों में जल भर आया और वे मन में अत्यंत हर्षित हुए॥69 (क)॥

*** श्रोता सुमति सुसील सुचि कथा रसिक हरि दास। पाइ उमा अति गोप्यमपि सज्जन करहिं प्रकास॥69 ख॥

भावार्थ:-

हे उमा! सुंदर बुद्धि वाले सुशील पवित्र कथा के प्रेमी और हरि के सेवक श्रोता को पाकर सज्जन अत्यंत गोपनीय (सबके सामने प्रकट न करने योग्य) रहस्य को भी प्रकट कर देते हैं॥69 (ख)॥

चौपाई :

*** बोलेउ काकभुसुंड बहोरी। नभग नाथ पर प्रीति न थोरी॥ सब बिधि नाथ पूज्य तुम्ह मेरे। कृपापात्र रघुनायक केरे॥1॥

भावार्थ:-

काकभुशुण्डिजी ने फिर कहा- पक्षीराज पर उनका प्रेम कम न था (अर्थात् बहुत था)- हे नाथ! आप सब प्रकार से मेरे पूज्य हैं और श्री रघुनाथजी के कृपापात्र हैं॥1॥

*** तुम्हहि न संसय मोह न माया। मो पर नाथ कीन्हि तुम्ह दाया॥ पठइ मोह मिस खगपति तोही। रघुपति दीन्हि बड़ाई मोही॥2॥

भावार्थ:-

आपको न संदेह है और न मोह अथवा माया ही है। हे नाथ! आपने तो मुझ पर दया की है। हे पक्षीराज! मोह के बहाने श्री रघुनाथजी ने आपको यहाँ भेजकर मुझे बड़ाई दी है॥2॥

*** तुम्ह निज मोह कही खग साईं। सो नहिं कछु आचरज गोसाईं॥ नारद भव बिरंचि सनकादी। जे मुनिनायक आतमबादी॥3॥

भावार्थ:-

हे पक्षियों के स्वामी! आपने अपना मोह कहा, सो हे गोसाईं! यह कुछ आश्चर्य नहीं है। नारदजी, शिवजी, ब्रह्माजी और सनकादि जो आत्मतत्त्व के मर्मज्ञ और उसका उपदेश करने वाले श्रेष्ठ मुनि हैं॥3॥

*** मोह न अंध कीन्ह केहि केही। को जग काम नचाव नजेही॥ तृस्नाँ केहि न कीन्ह बौराहा। केहि कर हृदय क्रोध नहिं दाहा॥4॥

भावार्थ:-

उनमें से भी किस-किस को मोह ने अंधा (विवेकशून्य) नहीं किया? जगत् में ऐसा कौन है जिसे काम ने न नचाया हो? तृष्णा ने किसको मतवाला नहीं बनाया? क्रोध ने किसका हृदय नहीं

जलाया?॥4॥

दोहा :

***ग्यानी तापस सूर कबि कोबिद गुन आगार। केहि कै लोभ बिडंबना कीन्हि न एहिं संसार॥ 70 क॥

भावार्थ:-

इस संसार में ऐसा कौन ज्ञानी, तपस्वी, शूरवीर, कवि, विद्वान और गुणों का धाम है, जिसकी लोभ ने विडंबना (मिट्टी पलीद) न की हो॥ 70 (क)॥

*** श्री मद बक्र न कीन्ह केहि प्रभुता बधिर न काहि। मृगलोचनि के नैन सर को अस लाग न जाहि॥ 70 ख॥

भावार्थ:-

लक्ष्मी के मद ने किसको टेढ़ा और प्रभुता ने किसको बहरा नहीं कर दिया? ऐसा कौन है जिसे मृगनयनी (युवती स्त्री) के नेत्र बाण न लगे हों॥ 70 (ख)॥

चौपाई :

*** गुन कृत सन्यपात नहिं केही। कोउ न मान मद तजेउ निबेही॥ जोबन ज्वर केहि नहिं बलकावा। ममता केहि कर जस न नसावा॥1॥

भावार्थ:-

(रज, तम आदि) गुणों का किया हुआ सन्निपात किसे नहीं हुआ? ऐसा कोई नहीं है जिसे मान और मद ने अछूता छोड़ा हो। यौवन के ज्वर ने किसे आपे से बाहर नहीं किया? ममता ने किस के यश का नाश नहीं किया?॥1॥

*** मच्छर काहि कलंक न लावा। काहि न सोक समीर डोलावा॥ चिंता साँपिनि को नहिं खाया। को जग जाहि न ब्यापी माया॥2॥

भावार्थ:-

मत्सर (डाह) ने किसको कलंक नहीं लगाया? शोक रूपी पवन ने किसे नहीं हिला दिया? चिंता रूपी साँपिन ने किसे नहीं खा लिया? जगत में ऐसा कौन है, जिसे माया न व्यापी हो?॥2॥

*** कीट मनोरथ दारु सरीरा। जेहि न लाग घुन को अस धीरा॥ सुत बित लोक ईषना तीनी। केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी॥3॥

भावार्थ:-

मनोरथ क्रीड़ा है, शरीर लकड़ी है। ऐसा धैर्यवान् कौन है, जिसके शरीर में यह कीड़ा न लगा हो? पुत्र की, धन की और लोक प्रतिष्ठा की, इन तीन प्रबल इच्छाओं ने किसकी बुद्धि को मलिन नहीं कर दिया (बिगाड़ नहीं दिया)?॥3॥

*** यह सब माया कर परिवारा। प्रबल अमिति को बरनै पारा॥ सुत बित लोक ईषना तीनी। केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी॥3॥

भावार्थ:-

मनोरथ क्रीड़ा है, शरीर लकड़ी है। ऐसा धैर्यवान् कौन है, जिसके शरीर में यह कीड़ा न लगा हो? पुत्र की, धन की और लोक प्रतिष्ठा की, इन तीन प्रबल इच्छाओं ने किसकी बुद्धि को मलिन नहीं कर दिया (बिगाड़ नहीं दिया)?॥3॥

दोहा :

*** ब्यापि रहेउ संसार महुँ माया कटक प्रचंड। सेनापति कामादि भट दंभ कपट पाषंड॥ 71 क॥

भावार्थ:-

माया की प्रचंड सेना संसार भर में छाई हुई है। कामादि (काम, क्रोध और लोभ) उसके सेनापति हैं और दम्भ, कपट और पाखंड योद्धा हैं॥ 71 (क)॥

*** सो दासी रघुबीर कै समुझें मिथ्या सोपि। छूट न राम कृपा बिनु नाथ कहउँ पद रोपि॥ 71 ख॥

भावार्थ:-

वह माया श्री रघुवीर की दासी है। यद्यपि समझ लेने पर वह मिथ्या ही है, किंतु वह श्री रामजी की कृपा के बिना छूटती नहीं। हे नाथ! यह मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूँ॥ 71 (ख)॥

चौपाई :

*** जो माया सब जगहि नचावा। जासु चरित लखि काहुँ न पावा॥ सोइ प्रभु भ्रू बिलास खगराजा। नाच नटी इव सहित समाजा॥1॥

भावार्थ:-

जो माया सारे जगत् को नचाती है और जिसका चरित्र (करनी) किसी ने नहीं लख पाया, हे खगराज गरुड़जी! वही माया प्रभु श्री रामचंद्रजी की भृकुटी के इशारे पर अपने समाज (परिवार) सहित नटी की तरह नाचती है॥1॥

*** सोइ सच्चिदानंद घन रामा। अज बिग्यान रूप बल धामा॥ ब्यापक ब्याप्य अखंड अनंता। अकिल अमोघसक्ति भगवंता॥2॥

भावार्थ:-

श्री रामजी वही सच्चिदानंदघन हैं जो अजन्मे, विज्ञानस्वरूप, रूप और बल के धाम, सर्वव्यापक एवं व्याप्य (सर्वरूप), अखंड, अनंत, संपूर्ण, अमोघशक्ति (जिसकी शक्ति कभी व्यर्थ नहीं होती) और छह ऐश्वर्यों से युक्त भगवान् हैं॥2॥

*** अगुन अदभ्र गिरा गोतीता। सबदरसी अनवद्य अजीता॥ निर्मम निराकार निरमोहा। नित्य निरंजन सुख संदोहा॥3॥

भावार्थ:-

वे निर्गुण (माया के गुणों से रहित), महान्, वाणी और इंद्रियों से परे, सब कुछ देखने वाले, निर्दोष, अजेय, ममतारहित, निराकार (मायिक आकार से रहित), मोहरहित, नित्य, मायारहित, सुख की

राशि,॥3॥

*** प्रकृति पार प्रभु सब उर बासी। ब्रह्म निरीह बिरज अबिनासी॥ इहाँ मोह कर कारन नाहीं। रबि सन्मुख तम कबहुँ कि जाहीं॥4॥

भावार्थ:-

प्रकृति से परे, प्रभु (सर्वसमर्थ), सदा सबके हृदय में बसने वाले, इच्छारहित विकाररहित, अविनाशी ब्रह्म हैं। यहाँ (श्री राम में) मोह का कारण ही नहीं है। क्या अंधकार का समूह कभी सूर्य के सामने जा सकता है?॥4॥

दोहा :

*** भगत हेतु भगवान प्रभु राम धरेउ तनु भूप। किए चरित पावन परम प्राकृतनर अनुरूप॥ 72 क॥

भावार्थ:-

भगवान् प्रभु श्री रामचंद्रजी ने भक्तों के लिए राजा का शरीर धराण किया और साधारण मनुष्यों के से अनेकों परम पावन चरित्र किए॥ 72 (क)॥

*** जथा अनेक बेष धरि नृत्य करइ नट कोइ। सोइ सोइ भाव देखावइ आपुन होइ न सोइ॥ 72 ख॥

भावार्थ:-

जैसे कोई नट (खेल करने वाला) अनेक वेष धारण करके नृत्य करता है और वही-वही (जैसा वेष होता है, उसी के अनुकूल) भाव दिखलाता है, पर स्वयं वह उनमें से कोई हो नहीं जाता,॥ 72 (ख)॥

चौपाई :

*** असि रघुपति लीला उरगारी। दनुज बिमोहनि जन सुखकारी॥ जे मति मलिन बिषय बस कामी। प्रभु पर मोह धरहिं इमि स्वामी॥1॥

भावार्थ:-

हे गरुड़जी! ऐसी ही श्री रघुनाथजी की यह लीला है, जो राक्षसों को विशेष मोहित करने वाली और भक्तों को सुख देने वाली है। हे स्वामी! जो मनुष्य मलिन बुद्धि, विषयों के वश और कामी हैं, वे ही प्रभु पर इस प्रकार मोह का आरोप करते हैं॥1॥

*** नयन दोष जा कहँ जब होई। पीत बरन ससि कहुँ कह सोई॥ जब जेहि दिसि भ्रम होई खगेसा। सो कह पच्छिम उयउ दिनेसा॥2॥

भावार्थ:-

जब जिसको (कवँल आदि) नेत्र दोष होता है, तब वह चंद्रमा को पीले रंग का कहता है। हे पक्षीराज! जब जिसे दिशाभ्रम होता है, तब वह कहता है कि सूर्य पश्चिम में उदय हुआ है॥2॥

*** नौकारूढ़ चलत जग देखा। अचल मोह बस आपुहि लेखा॥ बालक भ्रमहिं न भ्रमहिं गृहादी।

कहहिं परस्पर मिथ्याबादी॥3॥

भावार्थ:-

नौका पर चढ़ा हुआ मनुष्य जगत को चलता हुआ देखता है और मोहवश अपने को अचल समझता है। बालक घूमते (चक्राकार दौड़ते) हैं, घर आदि नहीं घूमते। पर वे आपस में एक-दूसरे को झूठा कहते हैं॥3॥

*** हरि बिषइक अस मोह बिहंगा। सपनेहुँ नहिं अग्यान प्रसंगा॥ माया बस मतिमंद अभागी। हृदयँ जमनिका बहु बिधि लागी॥4॥

भावार्थ:-

हे गरुड़जी! श्री हरि के विषय में मोह की कल्पना भी ऐसी ही है, भगवान् में तो स्वप्न में भी अज्ञान का प्रसंग (अवसर) नहीं है, किंतु जो माया के वश, मंदबुद्धि और भाग्यहीन हैं और जिनके हृदय पर अनेकों प्रकार के परदे पड़े हैं॥4॥

*** ते सठ हठ बस संसय करहीं। निज अग्यान राम पर धरहीं॥5॥

भावार्थ:-

वे मूर्ख हठ के वश होकर संदेह करते हैं और अपना अज्ञान श्री रामजी पर आरोपित करते हैं॥5॥

दोहा :

*** काम क्रोध मद लोभ रत गृहासक्त दुखरूप। ते किमि जानहिं रघुपतिहि मूढ़ परे तम कूप॥ 73 क॥

भावार्थ:-

जो काम, क्रोध, मद और लोभ में रत हैं और दुःख रूप घर में आसक्त हैं, वे श्री रघुनाथजी को कैसे जान सकते हैं? वे मूर्ख तो अंधकार रूपी कुएँ में पड़े हुए हैं॥ 73 (क)॥

*** निर्गुन रूप सुलभ अति सगुन जान नहिं कोई। सुगम अगम नाना चरित सुनि मुनि मन भ्रम होई॥ 73 ख॥

भावार्थ:-

निर्गुण रूप अत्यंत सुलभ (सहज ही समझ में आ जाने वाला) है, परंतु (गुणातीत दिव्य) सगुण रूप को कोई नहीं जानता, इसलिए उन सगुण भगवान् के अनेक प्रकार के सुगम और अगम चरित्रों को सुनकर मुनियों के भी मन को भ्रम हो जाता है॥ 73 (ख)॥ ***अगला पेज...***